‘धार’ उपन्यास और कोयलांचल से हीरे की भांति उभरती मैना

क्षमा यादव

पी-एच.डी. शोधार्थी,

दिल्ली विश्वविद्यालय,

नई दिल्ली

सारांश

संजीव का उपन्यास ‘धार’ वर्तमान समय में आदिवासी जीवन की समस्याओं को उद्घाटित करता है। इस उपन्यास की पात्र मैना के माध्यम से संजीव एक प्रतिरोध रचते हैं। मैना अपने अधिकारों के प्रति सचेत है और शोषण की संस्कृति का खुलकर विरोध करती है। जहाँ एक तरफ वह पितृसत्ता से लड़ती है वहीं दूसरी तरफ शोषणकारी पूंजीवादी व्यवस्था से। प्रस्तुत आलेख संजीव के धार उपन्यास की साहसी और विद्रोहिणी पात्र मैना को समझने में मदद करेगा।

बीज शब्द: आदिवासी समाज, शोषण तंत्र, अस्मिता, पूंजीपति व्यवस्था।

प्रस्तावना

संजीव का ‘धार’ उपन्यास समकालीन समय में आदिवासी जीवन में आने वाली समस्याओं और उलझनों को प्रकट करते हुए आदिवासी जीवन के संघर्ष की गाथा कहता है। एक आदिवासी ग्राम बांसगडा की कहानी कहते हुए यह उपन्यास तमाम आदिवासी अंचलों की स्थिति का चित्रण कर देता है और भारतीय समाज के शोषण तंत्र को उद्घाटित करता है। “संजीव के उपन्यासों में व्यवस्थागत विसंगतियों के साथ पिछड़े अंचल के बहुमुखी शोषण का भी विकराल रूप विद्यमान है। पूंजीपति व्यवस्था और नौकरशाही ने समय समय पर नए रूप धारण कर शोषण को बनाए रखा है। अंगरेज तो चले गए लेकिन आजाद देश में नए नवअंग्रेज पैदा हुए हैं। ग्राम व पिछड़े अंचलों में शोषण का मध्ययुगीन रूप कायम है, बदला है तो शोषणतंत्र। संजीव के उपन्यासों में शोषण के विविध रूपों का चित्रण मिलता है।”¹ ‘धार’ उपन्यास का बांसगडा गाँव उन आदिवासी गांवों में से है जिन्हें प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से धनी होने का खामियाजा भुगतना पड़ा। यह उन गाँवों में से है जो तथाकथित विकास के मॉडल का शिकार हुआ। बांसगडा गाँव में तेज़ाब की फैक्ट्री खुलने के कारण

वहाँ के आदिवासी त्रस्त हैं। आदिवासियों के अस्तित्व पर आए संकट के बारे में अनुज लुगून कहते हैं, “आज के नव बाजारवादी दौर में आदिवासी समाज के जिस ‘विकास’ की बात कही जा रही है वह दरअसल आदिवासी समाज को भी एक उपभोक्ता के रूप में प्रशिक्षित कर उसे बाजार में घसीटने की कोशिश है। यही वह औपनिवेशिक नजरिया है जिसने आदिवासी समाज की अस्मिता और अस्तित्व को संकट की स्थिति में ला खड़ा किया है।”² ये फैक्ट्री इन आदिवासियों में नई-नई बीमारियों और इनके खेतों को बंजर करने का सबब बन रही है।

शोषणकारी व्यवस्था से संघर्ष करती मैना

‘धार’ उपन्यास की मुख्य पात्र मैना इस शोषणकारी व्यवस्था से दो-दो हाथ करती है और आदिवासियों पर होने वाले तमाम अत्याचारों का विरोध करती है। मैना ऐसी पात्र है जो बरबस ही पाठक का ध्यान खींच लेती है और कब उपन्यास के केंद्र में स्थापित हो जाता है पाठक को पता ही नहीं चलता। ‘धार’ उपन्यास को पढ़ने वाला पाठक मैना के चरित्र से प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाता। सत्ता और समाज के तमाम शोषण को सहते हुए मैना कोयलांचल के गर्भ से एक हीरे

के रूप में उभरती है और इस शोषणकारी और अमानवीय पूंजीवादी व्यवस्था का पुरजोर विरोध करती है। मैना की लड़ाई कई स्तर पर चल रही है। उसकी लड़ाई पितृसत्ता से भी है और शोषणकारी पूंजीवादी व्यवस्था से भी। उसकी लड़ाई स्वयं अपने परिवार से भी है और बाहरी लोगों से भी। उसकी लड़ाई आदिवासी समाज से भी और दि कु समाज से भी। वह सम्पूर्ण व्यवस्था पर सवाल उठाती है और कहती है, “कोयला का खजाना पर हम रहता है, फिर भी कंगाल?”³

मैना व्यवस्था की इस साजिश को बखूबी समझती है की किस तरह व्यवस्था आदिवासियों को कंगाल बनाए रखना चाहती है। वह जानती है की महेंद्र बाबु जैसे पूंजीपति लोग आदिवासियों की ज़मीन पर उद्योग लगाकर और उनसे अपनी फैक्ट्री में मजदूरी करवाकर, उनके श्रम से मुनाफा कमाना चाहते हैं। मैना पढ़ी-लिखी नहीं है परन्तु जागरूक है और बांसगडा की धरती पर तेज़ाब की फैक्ट्री खुलने का मतलब बखूबी समझती है। वह भली प्रकार जानती है की फैक्ट्री खुलने के कितने भयानक परिणाम होंगे। अतः वह इस फैक्ट्री का विरोध करती है और गाँव के अन्य लोगों को भी जागरूक करके इसका विरोध करने के लिए प्रेरित करती है। परन्तु विडंबना देखिए की व्यवस्था को ऐसी जागरूकता बिल्कुल पसंद नहीं। महेंद्र बाबु पैसे वाले आदमी हैं उनकी व्यवस्था और पुलिस प्रशासन से जान पहचान है। अतः वे मैना को पुलिस के द्वारा गिरफ्तार करवा देते हैं। जेल में भी मैना का शोषण होता है। जेल अधिकारी मैना का बलात्कार करता है। संजीव इस उपन्यास के माध्यम से दिखाना चाहते हैं की किस तरह इस पूरे शोषणकारी तंत्र में एक स्त्री पग-पग पर शिकार होती है और यदि वह स्त्री मैना की तरह विद्रोही हो तो उसकी नियति ही बन जाती है पग-पग पर ऐसे खूनी भेडियों का सामना करना। उसे हर मोड़ पर संघर्ष करना पड़ता है।

स्वाभिमान और साहस की प्रतिमूर्ति मैना

मैना का चरित्र एक निडर स्त्री के रूप में उभर कर सामने आता। वह अपने पति के भरोसे नहीं रहती, उस पर निर्भर नहीं रहती बल्कि आत्मनिर्भर है। मैना के लिए उसका आत्मसम्मान, उसका वजूद सबसे पहले है बाकि चीजें बाद में आती हैं। यह उसके आत्मसम्मान की होने का ही नतीजा है की वह फोकल जैसे पति के साथ नहीं

रहना चाहती जो महेंद्र बाबु जैसे लोगों के बहकावे में आकर अपने अस्तित्व अपने स्वाभिमान को भुला बैठा है। वह फोकल को छोड़ देती है और उसका घर छोड़ कर एक खाली पड़े रेल के डब्बे में रहने लगती है। आज भी भारतीय समाज में एक स्त्री का अपने पति को छोड़ना एक बहुत बड़ा कदम है। परन्तु मैना यह कदम सहज ही उठाती है। क्योंकि वह अपने स्वाभिमान के साथ समझौता नहीं कर सकती। संजीव के यहाँ ऐसे स्वाभिमान की स्त्री पात्रों की भरमार है ‘जसी बहु’ कहानी की जसी बहु⁴, ‘फाँस’ की कलावती उर्फ़ छोटी⁵ और ‘सर्कस’ की झरना उर्फ़ कामिनी⁶ भी ऐसे पात्र हैं जो अपने स्वाभिमान के लिए समाज से टकराते हैं।

मैना के साहस और बहादुरी के आगे संजीव का कोई अन्य पात्र नहीं टिकता, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष। वह गलत को गलत कहने का माद्दा रखती है। वह इस शोषणकारी व्यवस्था के सामने नहीं झुकती और हमेशा अपने समाज के लिए कुछ बेहतर करने की कोशिश करती रहती है। मैना ओझा और झाड-फूंक में विश्वास नहीं करती। वह भली प्रकार समझती है की किस तरह से गाँव का जानगुरु (ओझा) महेंद्र बाबु के कहे में आकार गाँव वाले लोगों को बहकाता है और उन्हें डराता है। जब मैना फैक्ट्री का विरोध करती है तो महेंद्र बाबु ओझा को पैसे देकर मैना को डायन घोषित करवा देता है। सारे गाँव वाले इस बात पर विश्वास भी कर लेते हैं और मैना को ढूँढने के लिए निकल पड़ते हैं। परन्तु मैना हार नहीं मानती। वह ओझा का डंटकर सामना करती है और उसकी सच्चाई भी गाँव वालों के सामने ले आती है। वह कहती है, “खा ज़ाहिर थान का कसम! खा माराँ बुरु का कसम! खा बधना देवी का कसम कि तू घूस नहीं खाता है, सच बोल रहा है। अरे ओकरा में तो तोर चेहरा लोक रहा है तो तू हो गया डाईन? तोरा घर में हम भेड़ मार के फेंक दे तो तू हो गया हत्तियारा...?”⁷ आदिवासी समाज में भी प्रचलित डायन प्रथा का यह स्वरूप ‘पाँव तले की दूब’⁸ उपन्यास में भी देखा जा सकता है।

समाज की वर्जनाओं को तोड़ती मैना

गौरतलब है की आदिवासी महिलाएं अपेक्षाकृत अधिक आज्ञाद खयालात हैं। रमणिका गुप्ता इस विषय में कहती हैं, “तथाकथित पिछड़ी या निम्न कही जाने वाली

जातियों की औरत इस मामले में इन तथाकथित उच्च-जातीय अथवा मध्यम वर्गीय स्त्रियों से सदैव कुछ अधिक आजाद रही हैं क्योंकि वह कमाती भी रही है। वह न सती होती थी, न ही किसी मर्द नाम के खूटे से बँधकर उसके मरने के बाद भी आजन्म विधवापन का बोझ ढोती है।⁹ मैना भी कमाती है। वह आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर है। मैना ने पितृसत्ता के द्वारा थोपी गयी तमाम वर्जनाओं और नैतिकता के लबादों को उतार फेंका है। यौन शुचिता जैसे स्त्री को बाँध कर रखने वाले विचारों में उसे तनिक भी विश्वास नहीं है। अपने पति को छोड़ने के बाद वह मंगर के साथ रहने लगती है और सार्वजनिक रूप से मंगर के साथ अपने सम्बन्ध को स्वीकार भी करती है। वह ठसके से कहती है, “मैना का जब मन चाहा मरद किया, मन से उतर गया, छोड़ दिया, मरज़ी से किया, मज़बूरी से नहीं”¹⁰ मैना अपनी शर्तों पर जीने वाली महिला है।

वह अपने नियम खुद बनती है। समाज के बने बनाए नियम कायदों पर नहीं चलती। वह फोकल को तो छोड़ ही देती है बाद में उसे मंगर की डरपोक और कायरता का पता चलता है तो उसका उससे भी मोहभंग होने लगता है। वह कहती है, “तुमको मालूम मामा जनखदान शुरू करने के पएले ही हम अपने सारे मर्दों का श्राद्ध कर चुके!”¹¹ अंत में मैना आदिवासियों को जागरूक करने और उनके हित के लिए आवाज उठाने वाले अविनाश शर्मा के प्रति अपने भावों को भी स्वीकार करती है। परन्तु वह उन भावों को शर्मा के सामने व्यक्त नहीं करती। बल्कि द्वन्द में उलझी रहती है। उसका यह द्वन्द इन पंक्तियों में दिखाई देता है। “क्यों तू औरत नहीं? फिर क्यों देखती है चाहना-भरी नजर से शर्मा को? सच-सच बता तू इसलिए ही नहीं डरती की तुम दोनों की बदनामी से जनखदान का सारा सपना चरमरा उठेगा? जनखदान कोई सजा नहीं है की तू सारी इच्छाओं को होम करदे।”¹² जनखदान उसके लिए महत्वपूर्ण है परन्तु उतनी ही महत्वपूर्ण हैं उसकी व्यक्तिगत इच्छाएँ। इस प्रकार मैना समाज के लिए खुद को न्यौछावर कर देने वाली महिला भी नहीं है बल्कि वह समाज के साथ साथ व्यक्ति को भी महत्व देती है।

बांसगडा के आदिवासियों के हित के लिए जनखदान खोलने में मैना का भी बड़ा योगदान है। मैना

बड़ी-बड़ी फैक्ट्री में मजदूरी करने का मतलब समझती है। वह भली प्रकार समझती है की इनमें मजदूरी करने का मतलब गुलामी करना है इसलिए कभी भी वह इन फैक्ट्रियों में मजदूरी करने का समर्थन नहीं करती। इसलिए वह जनखदान का समर्थन करती है और उसे बचाने में अपनी जी-जान लगा देती है। जब अंत में महेंद्र बाबु की साजिश के तहत सरकारी मुलाजिम जनखदान को गैर क़ानूनी बताकर उस पर बुलडोज़र चलाने आते हैं तो मैना वहाँ से नहीं हटती और इस अमानवीय व्यवस्था का शिकार हो जाती है। परन्तु संजीव मानते हैं कि मैना मरी नहीं बल्कि अमर हो गयी “जहाँ जहाँ बुलडोज़र पहुँचता है, उहाँ-उहाँ मैना होती है। कितनी लंबी डुबकी मार के कहाँ उतराएंगी- इसे कोई नहीं जानता। वह मरी नहीं, मर सकती ही नहीं, जिस दिन सब बुलडोज़र को उलट आएगी, वह फिर हमारे बीच चली आएगी।”¹³ सच ही कहा संजीव ने मैना कभी नहीं मर सकती। वह तो अमर है हर उस स्त्री के भीतर जो विद्रोह का बिगुल बजाती है।

निष्कर्ष

इस प्रकार धार उपन्यास में मैना एक स्वाभिमानि, आत्मसम्मानि और साहसी पात्र के रूप में उभर कर सामने आती है। जो अपने अधिकारों के प्रति जागरूक है और अपने हक के लिए लड़ना जानती है। उसके साहसी और विद्रोही चरित्र का चित्रण संजीव कुछ इस प्रकार करते हैं। “उसके भरे-भरे अभिमानी सिंदूरी चेहरे में जड़ी अंगारों सी आँखें...आँसू नहीं आग की लौ झिलमिला रही है उसमें, धू-धू कर जलते पूरे अन्तर्लोक की ज्वाला को पढ़ा जा सकता है उनमें। मैना ग़लत नहीं कहती, वह शमशान की जलती चिता है।”¹⁴ मैना वर्तमान समय में संघर्ष करने वाली हजारों-हजार महिलाओं की प्रेरणा बन सकती है। आज समाज को मैना जैसी बहादुर महिलाओं की आवश्यकता है।

सन्दर्भ सूची

1. काशिद गिरीश, *कथाकार संजीव*, शिल्पायन प्रकाशन, शाहदरा दिल्ली, संस्करण- 2008 पृष्ठ- 255

2. लुगुन अनुज, *आदिवासी अस्मिता प्रभुत्व और प्रतिरोध, समय से संवाद*, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, भूमिका 6
3. संजीव, *धार*, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्रा. लि., जगतपुरी दिल्ली, पहला संस्करण: 2018 पृष्ठ- 54
4. संजीव, *संजीव की कथा यात्रा*, दूसरा पड़ाव, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-110002, प्रथम संस्करण-2008 पृष्ठ- 122
5. संजीव, *फाँस*, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-110002, द्वितीय संस्करण- 2016, पृष्ठ- 38
6. संजीव, *सर्कस*, राधाकृष्ण पेपरबैक, नई दिल्ली- 110002, पहली आवृत्ति-2010, पृष्ठ- 203
7. संजीव, *धार*, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., जगतपुरी दिल्ली, पहला संस्करण: 2018, पृष्ठ- 118
8. संजीव, *पांव तले की दूब*, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, संस्करण-2016, पृष्ठ- 57
9. गुप्ता रमणिका, *स्त्री विमर्श: कलम और कुदाले के बहाने*, शिल्पायन प्रकाशन, शाहदरा दिल्ली, संस्करण- 2010 पृष्ठ 9-10
10. संजीव, *धार*, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लि., जगतपुरी दिल्ली, पहला संस्करण: 2018 पृष्ठ-64
11. वही, पृष्ठ- 162
12. वही, पृष्ठ- 162-63
13. वही, पृष्ठ- 200
14. वही, पृष्ठ- 162